ISSN 2815-8326

हिंदी त्रैमासिक

पहचान

देश से हम, हमसे देश

वर्ष 2 | अंक 2 | अक्टूबर - दिसंबर 2023 | पृष्ठ संख्या 32

प्रधान संपादक : प्रीता व्यास

आवरण चित्र - ईवा

BEST
CONSTRUCTION
BETTER
HOME

ArchPoint Ltd

ARCHPOINT LTD

You Dream, We make the Dreams True!

Our Best Services:

- PROVIDING END-TO-END RESOURCE CONSENT, EPA AND BUILDING CONSENT SERVICES
- FEASIBILITY STUDIES - PRE & POST PURCHASE OF YOUR PROPERTY
- ARCHITECTURAL DESIGNING
- PLANNING & PROJECT MANAGEMENT
- SURVEYING
- GEOTECHNICAL INVESTIGATIONS & REPORTS
- CIVIL ENGINEERING FOR INFRASTRUCTURE DESIGNING
- STRUCTURAL ENGINEERING

engineering new zealand
LICENSED BUILDING PRACTITIONER BUILDING CONFIDENCE
PMI NEW ZEALAND CHAPTER
ADNZ Professional Member

64 21848 552 archpoint.co.nz

GODWIN-AUSTEN

GODWIN-AUSTEN

You Wish, We bring the wishes to Reality!

Our Best Services:

- Subdivisions & Building Construction on Turn Key Basis
- Land and Home Packages
- Design & Build
- 10 Years Master Builder Guarantee
- Auckland Wide Operations

MASTER BUILDERS
PMI NEW ZEALAND CHAPTER

64 21889 918 OR 64 21848 552 godwinausten.co.nz

हिंदी त्रैमासिक
पहचान
देश से हम, हमसे देश

संस्थापक/ प्रधान संपादक
प्रीता व्यास

सलाहकार संपादक
रोहित कृष्ण नंदन

सहयोगी संपादक
वंदना अवस्थी दुबे
माला चौहान

ले आउट/ ग्राफिक्स
Design n Print, India

कवर पेज
ईवा

प्रकाशक
पहचान
आकलैंड, न्यूज़ीलैंड
editor@pehachaan.com

पत्रिका में प्रकाशित लेख, रचनाएं, साक्षात्कार लेखकों के निजी विचार हैं, उनसे प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं. रचनाओं की मौलिकता के लिए लेखक स्वयं जिम्मेवार है. कुछ चित्र और लेखों में प्रयुक्त कुछ आंकड़े इंटरनेट वेबसाइट से संकलित किये गए हो सकते हैं.

दो शब्द

23 अगस्त 2023, भारत ने इतिहास रच दिया. चंद्रयान 3 के चांद पर उतरने के साथ ही भारत अब एक स्पेस पावर बन गया है. क़रीब दस साल पहले भारत के चंद्रयान 2 के लिए रूस लैंडर बनाने वाला था. लेकिन रूस के मंगल अभियान को मिली नाकामी के बाद भारत ने अपने दम पर ही काम करने का फ़ैसला किया. चंद्रयान 2 कामयाब नहीं हुआ लेकिन चंद्रयान 3 की कामयाबी ने विश्व भर में बसे भारतियों के सर ऊंचे कर दिए. आने वाले दशकों में 'आओ तुम्हें चांद पे ले जाएं', सिर्फ गीत नहीं बल्कि सच्चाई हो जायेगा. बहुत से देश मानव मिशन भेजने की तैयारी में हैं.

नरेंद्र मोदी के कार्यकाल के दौरान भारत में सांप्रदायिक तनाव की कई घटनाएं हुई हैं लेकिन चंद्रयान 3 की सफलता को लेकर अलग-अलग समुदायों के बीच भेदभाव मिटता हुआ दिखा. मिशन की सफलता के लिए मंदिरों, गुरुद्वारों और मस्जिदों में प्रार्थना सभाएं की गईं. देश वही तरक्की करते हैं जिनके निवासियों के आपसी भेदभाव देश की भावना से बड़े नहीं हो जाते. आपसी प्रेम ही सबलता का आधार है. महात्मा गांधी ने कहा था 'जिस दिन प्रेम की शक्ति, शक्ति के प्रति प्रेम पर हावी हो जायेगी, दुनिया में अमन आ जायेगा.' दुनिया को सबसे बड़ी आवश्यकता प्रेम और अमन की ही है.

जब अमन चैन होता है, प्रेम शांति होती है तभी उत्सवों के रंग भी खिलते हैं. नवदुर्गा के व्रत उपवास से जो क्रम शुरू होता है वो फिर दशहरे की तैयारियों और पुताई-सफाई के कामों के साथ दीपावली तक चलता ही रहता है बल्कि उसके थोड़ा बाद तक गोवर्धन पूजा, अन्नकूट. साल जाते जाते सांता के बड़े से झोले से मिले उपहारों के साथ विदा लेता है. हर पूजा की, त्यौहार की, उत्सव की अपनी-अपनी कथाएं, अपना-अपना महत्व है जो जानना ज़रूरी है वरना तो हम लकीर के फ़कीर हो कर रह जाएंगे. 'पहचान' की कोशिश है कि इन सब तत्वों को समेटती चले. अपने सभी पाठकों को शुभकामनाएं देती हूं.

आपका साथ और सहयोग हमारा बल है. यही बल हमारी पहचान है. जुड़िये और जुड़े रहिये.

प्रीता व्यास

इस अंक में...

पाठकीय प्रतिक्रियाएं		5
आलेख		
बाल दिवस, पर्यावरण और बच्चे	पंकज चतुर्वेदी	6-8
लोक संस्कृति		
चंदा ऊगे बड़े भिंसारे	वंदना अवस्थी दुबे	9-10
बुंदेलखंड का राई नृत्य	डॉ. प्रेमलता मिश्रा	11-15
व्यंग्य		
लक्ष्मी - उलूक संवाद	संजीव जायसवाल 'संजय'	16-17
संस्मरण		
मैथिलीशरण गुप्त - साधारण व्यक्ति, असाधारण लेखनी	डा. अंजलि गुप्ता	18-20
कहानी		
मुट्ठी भर प्यार	सुधा गोयल	21-24
कविता		
आओ कुछ बात करें	मृत्युंजय कुमार सिंह	25
केवल मां ही	डा.अनीता पंडा 'अन्वी'	26
नारी तुम केवल श्रद्धा हो?	डा.अनीता पंडा 'अन्वी'	26
बाल साहित्य		
बिल्ली को मिला ज्ञान	आशा पाण्डेय ओझा	27
चित्र		28
पुस्तक समीक्षा		
जलधि समाना बूंद में मन में ठिठक के ठहरती कविताएं	मधु सक्सेना	29-30
चित्र चयन		
इस तिमाही का चित्र	विनोद मिश्र सुरमणि	32

पाठकीय
प्रतिक्रियाएं

पत्रिका के जुलाई-सितंबर (2023) अंक में राजशेखर व्यास जी का संस्मरण पढ़ कर मैं लगभग छह दशक पूर्व की स्मृतियों में चला गया जब छतरपुर की सरस्वती सदन पुस्तकालय में बैठ कर धर्मयुग, साप्ताहिक हिंदुस्तान, कादम्बिनी आदि पत्रिकाओं का अंक आते ही वाचन करते थे. उस समय वहां श्री सुरेन्द्र शर्मा जी का बड़े भाई जैसा स्नेह मिलता था. पहचान का विशेष आभारी हूं.

ओमप्रकाश दीक्षित, दतिया, भारत

कवर पेज बहुत खूबसूरत है. निश्चित तौर पर पहचान एक संपूर्ण पत्रिका है. साहित्य की सभी विधाओं और विचार से समृद्ध है. शुभकामनाएं.

जे. पी. ओझा, आस्ट्रेलिया

वास्तव में पहचान पत्रिका अंतरराष्ट्रीय मानदंडों को पूरा करती है. इसका कलेवर अद्भुत, अविस्मरणीय, अलौकिक लगा मुझे. पत्रिका की पूरी टीम एवं संपादक जी को बहुतबहुत साधुवाद.

राधेश्याम कुशवाहा विजय, फर्रुखाबाद (उ.प्र.), भारत

पहचान की हिंदी से मैं प्रभावित हूं. सुदूर में अपनी मिट्टी की सुगंध को संजोये रखने का आपका संकल्प एवं समर्पण असाधारण है.साधुवाद.

एस. कौशलेन्द्र, मस्कट, ओमान

पत्रिका का ये अंक भी बहुत बढ़िया है. सभी लेख पसंद आये. विशेष कर सांपों के महत्व को बताता पंकज चतुर्वेदी जी का लेख. उनकी पूजा की परंपरा में कैसे दूध पिलाये जाना उनके जीवन के लिए हानिकारक है फिर भी यही प्रथा चली जा रही है. ऐसे लेख आई ओपनर होते हैं. धन्यवाद.

मोहन सप्रा, चंडीगढ़, भारत

मुझे लगा था ये सिर्फ कहानी कविताओं की पत्रिका होगी लेकिन फिल्म समीक्षा पा कर अच्छा लगा. मैंने तो 'भीड़' इस समीक्षा को पढ़ने के बाद ही खोज कर देखी. फिल्म अच्छी है और आपकी पत्रिका भी. शकील आज़मी जी को समीक्षा के लिए बधाई.

अर्जुन नामदेव, बमीठा, भारत

किसी के रिफरेन्स देने पर मैंने आपकी वेबसाइट देखी, दो दिन लगा कर सब पढ़ डाला. पत्रिका के सभी अंक पसंद आये, कवर पेज का आपका चुनाव बहुत ही आला है. बधाई देना चाहूंगी पत्रिका ने एक साल पूरा किया है. अगले अंक का इंतज़ार है.

निम्मी कुमार, सूवा, फीजी

बाल दिवस, पर्यावरण और बच्चे

पंकज चतुर्वेदी

हम बच्चों को अधिक से अधिक शिक्षा देकर जागरूक बना रहे हैं, बेहतर ज़िंदगी जीने की सीख दे रहे हैं या फिर अच्छा पैसा कमाने के लिये तैयारी करवा रहे हैं? उम्मीदों, सपनों, चुहलताओं और समाज व देश का भविष्य बनने को आतुर बच्चों के लिये यह बाल दिवस महज एक खेल का दिन नहीं है, यह संकट सामने खड़ा है कि वे जब बड़े होंगे या उनका वंश आगे बढ़ेगा तो वे किस दुनिया में सांस लेंगे, किस तरह का पानी पिएंगे, उनकी बौद्धिक क्षमता का इस्तेमाल समाज की खुशहाली के लिये होगा या फिर मानवता को बचाने के लिये संघर्षरत रहेंगे?

हमारी शिक्षा की भाषा, समाजिक विज्ञान व विज्ञान की पुस्तकों का बड़ा हिस्सा अतीत को याद करने का होता है लेकिन आज जरूरत है कि उनमें भविष्य की दुनिया पर विमर्श हो. बाल मन और जिज्ञासा एकदूसरे के पूरक शब्द ही हैं. जिज्ञासा का सीधा संबंध विज्ञान से है.

अपने परिवेश की हर गुत्थी को सुलझाने की जुगत लगाना बाल्यावस्था की मूलप्रवृत्ति है. भौतिक सुखों व बाजारवाद की बेतहाशा दौड़ के बीच दूषित हो रहे सामाजिक परिवेश और बच्चों की नैसर्गिक जिज्ञासु प्रवृत्ति पर बस्ते के बोझ और इम्तेहानों की बौद्धिक तंगी के कारण एक बोझिल सा माहौल पैदा हो गया है. ऐसे में बच्चों के चारों ओर बिखरे विज्ञान की रोचक जानकारी सही तरीके से देना बच्चों के लिये राहत देने वाला कदम होगा.

किसी भी प्रगतिगामी और आधुनिक देश के लिये जरूरी है कि वहां के बाशिंदों की सोच वैज्ञानिक हो. बच्चे के सामने दुनिया के मौजूदा संकट का एक नक्शा हो व उससे जूझने या संकट को कम करने के सपने हों. यह कतई जरूरी नहीं

कि छोटे से बच्चे को भविष्य की चुनौतियों या पर्यावरणीय संकट के डर से मुस्कुराना भुलाने पर मजबूर कर दिया जाये, लेकिन ऐसा भी नहीं कि वे उससे बेखबर रहें.

एक बात स्पष्ट करना चाहूंगा कि 'पर्यावरण' स्वयं कुछ करने का नाम है, ना कि पढ़ने का. हां, यह बात जरूर है कि क्या, क्यों, कैसे, कब, कहां जैसे सवालों का जवाब तलाशने में पढ़ना मदद अवश्य कर सकता है. लेकिन पढ़े हुए का आनंद लेने और उसे अपने व्यावहारिक जीवन में उतारने के लिये उसे स्वयं करना जरूरी है. घर के बाहर की ज़मीन कच्ची रहे तो किस तरह पानी को ज़मीन में जज्ब कर बचाया जा सकता है, पेड़ लगाने के बाद उसे बड़ा करने के लिये क्या किया जाये, या बिजली का व्यय बचाकर हम कैसा भविष्य बना सकते हैं? ऐसे सवाल बच्चे के मन में उपजना जरूरी है.

आज बच्चे जिस दुनिया में आंख खोल रहे हैं वह पूरी तरह विज्ञानमय और पर्यावरण के लिये चुनौतीमय है. उनका मन एक सपाट तख्ती की तरह होता है, वे अपने परिवेश में जो कुछ देखते सुनते हैं, उनके मन पर अंकित हो जाता है. बड़े होने के साथ ही उनके सामने क्या? क्यों? कैसे? के सवालों का पहाड़ खड़ा हो जाता है. जब उनको मिलने वाले सवालों के जवाबों में तथ्यों व तर्क का अभाव होता है तो उनमें अंधविश्वास की ग्रंथि घर कर जाती है. लेकिन यदि जिज्ञासाओं का समाधान विज्ञानसम्मत होता है तो एक वैज्ञानिक प्रवृत्ति जन्म लेती है, जिसकी हमारे देश भारत को बेहद जरूरत है. पंडित नेहरू ने भी भारत में इसी साइंटिफिक टेंपर या वैज्ञानिक प्रवृत्ति लाने पर जोर दिया था.

सवा सौ करोड़ से अधिक की आबादी वाले भारत देश में छह से 17 वर्ष के स्कूल जाने वाले बच्चों की संख्या लगभग 16 करोड़ है. इसके अलावा कई करोड़ ऐसी बच्चियां व लड़के भी हैं, जो कि अपने देश, काल और परिस्थितियों के कारण स्कूल नहीं जा पा रहे हैं. पर वे सांस लेते हैं, भोजन, पानी उनकी भी आवश्यकता है, फिर उन्हें पर्यावरण के ज्ञान से वंचित कैसे रखा जा सकता है?

लेकिन इतना बड़ा बाजार और इस मसले पर सकारात्मक पुस्तकें ना के बराबर. अनुमान है कि हमारे देश में सभी भाषाओं में मिलाकर पाठ्येत्तर पर्यावरणीय विज्ञान पुस्तकों का सालाना आंकड़ा मुश्किल से पांच सौ को पार कर पाता है. यह एक कटु सत्य है कि दूरस्थ अंचलों को छोड़ दें, दिल्ली जैसे महानगर में एक फीसदी बच्चों के पास उनके पाठ्यक्रम के अलावा कोई विज्ञान पुस्तक पहुंच ही नहीं पाती है.

उन बच्चों के लिये विज्ञान के मायने एक उबासी देने वाला, कठिन परिभाषाओं और कठिन कहे जाने वाला विषय मात्र है. लेकिन इन बच्चों को जब कुछ प्रयोग करने को कहा जाता है या फिर यूं ही अपनी प्रकृति में विचरण के लिये कहा जाता है तो वे उसमें डूब जाते हैं. पुस्तक मेलों में ही देख लें, जहां जादू, मनोरंजक खेल, कंप्यूटर पर नए प्रयोग सिखाने वाली सी.डी. बिक रही होती है, वहां बच्चों की भीड़ होती है.

इन दिनों विज्ञानगल्प के नाम पर विज्ञान के चमत्कारों पर ठीक उसी तरह की कहानियों का प्रचलन भी बढ़ा है, जिनमें अंधविश्वास या अविश्वनीयता की हद तक के प्रयोग होते हैं. किसी अन्य गृह से आये अजीब जन्तु या एलियन या फिर रोबोट के नाम पर विज्ञान को हास्यास्पद बना दिया जाता है. समय से बहुत आगे या फिर बहुत पीछे जाकर कुछ कल्पनाऐं की जाती हैं. लेकिन ये कल्पनाएं 140 साल पहले की फ्रांसीसी लेखक ज्यूल वार्न के बाल उपन्यास 'ट्वेंटी थाउजेंड लीग अंडर दी सी' जैसी कतई नहीं होती हैं. जान कर आश्चर्य होगा कि लेखक ने उस काल में समुद्र की उर्जा, वहां मिलने

वाली काई से जीवन जीने की कल्पना करते हुए रोमांचक उपन्यास लिख दिया था.

यह विडम्बना ही है कि आज बाजार पौराणिक, लोक और परी कथाओं से पटा हुआ है, हालांकि इसमें से अधिकांश बाल साहित्य कतई नहीं है. भूतप्रेत, चुड़ैल के कामिक्स बच्चों को खूब भा रहे हैं लेकिन हमारे देश के लेखक एक ऐसा अच्छा विज्ञानगल्प तैयार करने में असफल रहे हैं, जिसके गर्भ में नव सृजन के कुछ अंश हों, किसी नई खोज की शुरुआत हो सके.

बच्चों के बीच प्रकृति पर केन्द्रित पुस्तकें लोकप्रिय बनाने और उनके ज्ञान के माध्यम से समाज में जागरुकता लाने की यदि ईमानदारी से कोशिश करना है तो पुस्तकों को तैयार करते समय पुस्तकों की भाषा, स्थानीय परिवेश का विज्ञान, वे जो कुछ पढ़ रहे हैं, उसका उनके जीवन में उपयोग कहां और कैसे होगा, पुस्तकों के मुद्रण की गुणवत्ता और उनके वाजिब दाम पर ध्यान देने की आवश्यकता है.

याद रखना होगा कि अपने परिवेश को जानने-बूझने का गुण बच्चों में अधिक होता है. बच्चों की इस रुचि को बनाए रखने और इसको विस्तार देने में बालपन की रोमांचक दृष्टि की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है. (जैसे कि बचपन में ही बादलों को देख कर उसमें हाथी या अन्य छवि खोजना, घास के हरेपन को महसूस करने जैसे एहसास होते हैं.) जाहिर है कि हर बच्चा नैसर्गिक रूप से वैज्ञानिक नजरिए वाला होता है. जरूरत तो होती है बस उसे अच्छी पुस्तकों व प्रयोगों के माध्यम से तार्किक बनाने की.

पर्यावरण पठन को लोकप्रिय बनाने के लिये भी कुछ प्रयास करने होंगे. बड़ी संख्या में बच्चे और उनके अभिभावक यह मान लेते हैं कि विज्ञान कुछ जटिल विषय है जो कि कुछ 'होशियार' बच्चों के बस की ही बात है. यह भ्रान्ति भी व्यापक है कि विज्ञान वही पढ़े जो कि डॉक्टर, इंजीनियर या वैज्ञानिक बनना चाहता है.

प्रकृति विचरण के नियमित कार्यक्रम, बच्चों से उनकी जिज्ञासाओं को नियमित रूप से डायरी में नोट करने व उसके सम्भावित सिद्धान्तों पर चर्चा करने के लिये प्रेरित करना, जंतरमंतर, तारा मंडल, औषधीय पौधों के बगीचों, चिड़ियाघर, छोटे कारखानों आदि में बच्चों के नियमित भ्रमण आयोजित करना, स्कूल / सामुदायिक पुस्तकालयों में 'खुद करके देखो', रोचक तथ्यों जैसे विषयों की पुस्तकों के लिये अलग से स्थान रखना और वहां बच्चों के नियमित, मुक्त आवागमन को सुनिश्चित करना जैसे कार्य स्कूलों में करने होंगे.

एक बात और, हमारे देश में बच्चों के लिये किये जा रहे किसी भी काम को प्राय: धर्मार्थ मान लिया जाता है, जबकि जरूरत इस बात की है कि बच्चों को विज्ञान के करीब लाने के कार्य को सरकार मानव संसाधन विकास की मूलभूत योजनाओं में प्राथमिकता से शामिल करे. आज हमारा जीवन आये दिन नई-नई तकनीकी खोजों से आलोकित हो रहा है, लेकिन इनकी खोज के पीछे की कहानियां, व्यक्ति, संस्था गुमनाम ही हैं. ऐसे अन्वेषणों पर तत्काल पुस्तकें जरूरी हैं ताकि बच्चों का कौतुहल और जागृत हो और वे खुद ऐसी खोजों के लिये प्रेरित हों. इसमें प्राथमिकता के आधार पर बच्चों के लिये ढेर सारी विज्ञान पुस्तकों का प्रकाशन तथा उनकी बच्चों तक सहजता से पहुंच बनाना बेहद सस्ता और आसान उपाय है. जरूरत बस सशक्त इच्छाशक्ति की है. ■

चंदा ऊगे बड़े भिंसारे

वंदना अवस्थी दुबे

पितृपक्ष खत्म होने को है. मौसम में गुलाबी ठंडक आ गयी है. सुबह हल्का सा कुछ ओढ़ लेने का मन करता है. ज़ाहिर है, नवरात्रि आ गयी है. ऐसी गुलाबी ठंडक नवरात्रों में ही होती है. नवरात्रि शुरु होते ही मेरा मन एकदम बचपन की ओर भागने लगता है. बचपन की उन गलियों में, जहां हम लड़कियां पूरे साल नवरात्रि का इंतज़ार करते थे. ये इंतज़ार इसलिये नहीं होता था कि हमें नौ दिन व्रत करना है, बल्कि नौरता के लिये होता था ये इंतज़ार. नौरता यानी बुंदेलखंड का अद्भुत सांस्कृतिक उत्सव. नौ दिन चलने वाला रंगों का पर्व. हमारे पड़ोस में विश्वकर्मा आंटी रहती थीं, हमारे नौरता का इंतज़ाम उन्हीं के दरवाज़े पर होता. नौरता कथा शुरु करने से पहले आइये आपको थोड़ा सा परिचय दे दूं इस अद्भुत खेल का. बुंदेलखंड में नौरता या सुअटा, लड़कियों द्वारा खेला जाने वाला गज़ब का खेल है. लड़कियां नवरात्रि शुरु होने के दस दिन पहले से रंग बनाने लगतीं. अब तो बाज़ार में रंगोली के पर्याप्त रंग उपलब्ध हैं सो दिक्कत नहीं होती. तो लड़कियां रंग बनातीं, डिब्बों में भरभर के रखतीं. रंगोली की नई-नई डिज़ाइनें खोजी जातीं. फिर किसी एक स्थल को चुना जाता इस खेल को संपन्न करने के लिये.

जिस के दरवाज़े पर नौरता खेलने की अनुमति मिल जाती, वहां जितनी लड़कियां होतीं, गिन के उतने ही खाने बनाये जाते और फिर उन्हें गोबर से लीपा जाता. छुई मिट्टी से चौकोन खाने बनाये जाते. ये खाने एकदम बराबरी के होते. वहीं दीवार पर सूरज, चांद और हिमालय भी बनाये जाते, काली मिट्टी से. मिट्टी की गौर भी वहां बिठाई जाती. नौ दिन लड़कियां बड़े सबेरे इस स्थान पर इकट्ठी होती, और फिर

अपने-अपने खानों में मनभावन रंगोली बनातीं.

हम लड़कियां सबेरे ठीक साढ़े तीन बजे उठ जातीं. सभी अगल-बगल की थीं, सो एक दूसरे को आवाज़ लगातीं, और मिलजुल के निकल जातीं गोबर तलाशने. सभी लड़कियों को अपने-अपने खाने लीपने होते थे. आधा घंटा तो इस लीपे हुए को सूखने में ही लगता, तो लड़कियां जल्दी से जल्दी लिपाई का काम खत्म कर लेना चाहती थीं. हमारे घर के सामने ही मेरी दोस्त रहती थी अनीता. उसके घर में गायें थीं. तो मैंने उसे कह रखा था कि वो हम लोगों के लिये गोबर निकाल के गेट के पास रख दिया करे. चूंकि अनीता नौरता नहीं खेलती थी सो उसे सुबह से न जगाना पड़े इसलिये ये व्यवस्था की गयी. हम चार-पांच लड़कियों के लायक गोबर मिल जाता. लिपाई के काम के बाद विश्वकर्मा आंटी हिमांचल, सूरज, चंदा और गौर की पूजा करवातीं. एक थाली में हल्दी, कुमकुम, चावल, स्थाई रूप से रखे होते. पूजा का जल, फूल और दूब रोज़ ताज़े ही लाये जाते.

फिर शुरु होती आरती

उगई न होय बारे चंदा
हम घर होय लिपना-पुतना
सास न होय दै दै झरियां
ननद न होय चढ़ै अटरियां
जौ के फूल, तिली के दाने

चंदा ऊगे बड़े भिन्सारे'

इतना मधुर गीत है ये कि मुझे आज इतने सालों बाद भी मुझे ज्यों का त्यों याद है. फिर एक गीत और होता, जिसमें हर लड़की के परिवार वालों के नाम होते. फिर शुरु होता नौरता के गीतों का दौर और रंगोलियों का मांडना. हर लड़की, दूसरी से बढ़िया रंगोली बनाना चाहती. चार बजे सुबह शुरु होने वाला ये नौरताकर्म, छह बजे समाप्त होता. रंगोली बनाने के बाद सारी लड़कियां अपनीअपनी थाली के, उस दिन के बचे हुए रंग एक जगह इकट्ठे करतीं, और फिर सड़क पर काफ़ी दूर जा के उन्हीं रंगों से बीच सड़क पर नौरता का भूत बनातीं. फिर पलट के देखे बिना, दौड़ के नौरता के स्थान पर पहुंचतीं. केवल कुंआरी लड़कियों का ये अद्भुत खेल नवरात्रि के नौवे दिन समाप्त होता. अष्टमी की शाम को एक छिद्रित मटकी में दिया जला के सारी लड़कियां चंदा इकट्ठा करने जातीं. विश्वकर्मा आंटी तब भी साथ होतीं. वे गातीं

'पूछत-पूछत आये हैं
नारे सुअटा कौन बड़े जू की पौर'

हर घर से महिलाएं बेहद प्रसन्न मन कुछ न कुछ चंदा ज़रूर देतीं. ये चंदा गौर की प्रतिमा को सजाने के ही काम में लाया जाता. नौवी के दिन 'हप्पू' होता. इस शाम को लड़कियां रंगोली बनातीं और फिर अपने-अपने घर से लाये व्यंजन मिल बांट के खातीं. हाथ में ग्रास पकड़े रहतीं, आंटी ज़ोर से गातीं

'पराई गौर की आंय देखो झाय देखो
का पैरें देखो, नाक बूची देखो, कान बूचे देखो'

हप्पू.....और सारी लड़कियां अपने हाथ का ग्रास मुंह में डालतीं. इसी तरह पूरा गीत पराई गौर की बुराई और अपनी गौर की तारीफ़ में गाया जाता. गीत के साथ-साथ ही हप्पू भी संपन्न हो जाता. इसके साथ ही संपन्न होता नौ दिन चलने वाला ये रंगीला खेल नौरता. लड़कियों की आंखों में इंतज़ार होता, अगली शारदेय नवरात्रि का. ■

प्रचलित लोक कथा

इस खेल के प्रमुख आधार के रूप में समस्त बुंदेलखंड जिस कथा को महत्त्व देता है, वह एक दानव, राक्षस या भूत से संबंधित है. सुअटा दैत्यदानव या भूत था, जो कुमारी कन्याओं को सताता था. एक वर्णना के अनुसार वह उनको पकड़कर खा जाता था, जबकि दूसरी वर्णना के अनुसार वह कन्याओं से छेड़-छाड़ करता था और तीसरी जनश्रुति में उनका अपहरण कर उन्हें संकट में डालता था. इन कारणों से कन्याओं को उसकी पूजा करने को विवश होना पड़ा. साथ ही उससे रक्षा के लिए उन्हें मां गौरी से प्रार्थना करनी पड़ी. उनकी आराधना से प्रसन्न होकर माता ने उस दानव या राक्षस का विनाश कर डाला. इस अंचल के कुछ भू-भागों में देवी पार्वती द्वारा राक्षस के संहार का उल्लेख नहीं है, पर वहां कुछ क्रिया व्यापारों के माध्यम से इसका संकेत मिलता है. उदाहरण के लिए, दानव या भूत की मिट्टी की मूर्ति को मिटा देना या उसके अंगभंग करना, गली में बने उसके चित्र को मिटाना, उसे अपमानित करना, उसकी 'मरग' (अंत्येष्टि भोज) करना आदि.

कथा का एक रूप यह है कि 'सुअटा' और 'मामुलिया' सगे भाई बहिन थे. मामुलिया ने अपने भाई की अपहरण करने की आदत खत्म करने के लिए अपना बलिदान कर दिया था और अंतिम क्षणों में अपहरण न करने का वचन लिया था. सुअटा ने अपनी तरफ से यह शर्त रखी थी कि यदि कन्याऐं उसकी मूर्ति बनाकर नौ दिन तक पूजा करेंगी, तो वह उन्हें कभी परेशान नहीं करेगा. इसीलिए कुमारी कन्याऐं नवरात्रि में उसकी पूजा करती हैं.

बुंदेलखंड का राई नृत्य

डॉ. प्रेमलता मिश्रा

राई बुंदेलखंड का सर्वोत्कृष्ट लोक नृत्य है. मात्र राई कह देने से जैसे बुंदेलखंड के लोक रंग की आभा चारों ओर बिखर जाती है. यह एक बारहमासी नृत्य है, तभी सभी किस्म के उत्सवों, समारोहों, मांगलिक अवसरों तथा विभिन्न ऋतुओं में इसका प्रदर्शन दर्शकों को भाव-विभोर कर देता है. यह विधा बेहद प्राचीन है, इसके कई प्रमाण हैं. सूफी कवि मलिक मुहम्मद जायसी ने पदमावत में राई नाचने वाली बेड़नी का उल्लेख किया है 'जानी गति बेडिन दिखलाई. बांह डुलाय जीउ लेई जाई'

मध्ययुगीन कवि केशवदास ने रामचंद्रिका में लिखा है

'कहूं भाट भरयो कंकरे, मान पावे

कहूं लोलिनी बेडिनी गीत गावे.'

यदि किसी कांसे की थाली में कुछ राई के दाने डाल कर उसे थोड़ा सा खनखना दो या फिर छांछ में रई यानि मथानी बिलो कर मक्खन निकालो, ठीक उसी तरह इस लोक नृत्य में नर्तकी घूमती है, चक्कर लगाती है, बल खाती है. शायद तभी इस नृत्य को राई कहा गया. राई के संबंध में और कई भी मान्यताएं हैं जैसे कि इसके गीत राधा द्वारा कृष्ण को लुभाने के लिए गाये जाते थे, तभी राधा को एक नाम राई भी दिया गया है.

एक मान्यता है कि राई शब्द संस्कृत के शब्द रागित, प्राकृत के रागी, राजसी और राधिका से बना. वैसे तो यह

बुंदेलखंड का लोक नृत्य है लेकिन इसे चंबल, यहां तक कि राजस्थान के कुछ हिस्सों तक भी देखा जाता है. मान्यता तो यह भी है कि असल में राई के कलाकार आदिकाल में राजस्थान की तरफ से ही बुंदेलखंड आए थे. इन कलाकारों को राजनर्तक का दर्जा मिला था. फिर पहले मुगलों और उसके बाद अंग्रेजों से अपनी आजादी को अक्षुण्य रखने के लिए बुंदेलखंडी राजे-रजवाड़े लगातार कोई तीन सौ साल लड़ते रहे. जान लें कि बुंदेलखंड कभी किसी का गुलाम नहीं रहा, लेकिन लगातार लड़ाई व बड़े साम्राज्यों से संघर्ष के चलते उनकी जागीरदारी व रजवाड़े कमजोर होते गए. फलस्वरूप राई कलाकारों को प्रश्रय मिलना बंद हो गया. वे सड़क पर आ गए. पन्ना का देवेन्द्रनगर, छतरपुर का बिजावर, दमोह का पथरिया जट जैसे कई गांव इन नर्तकों के ठिकाने बन गए. बदनाम हुए, मजबूरी में उन्हें देह व्यापार की ओर जाना पड़ा. आज एक बार फिर राई को शासकीय मान्यता व सम्मान मिल रहा है व राष्ट्रपति भवन तक इसका प्रदर्शन हो चुका है. फलत: इसकी रंगत लौट रही है.

मध्य प्रदेश के सागर संभाग के पांच, दतिया, और जबलपुर, सतना जिलों का कुछ हिस्सा और उत्तर प्रदेश के झांसी संभाग के सभी सात जिले बुंदलेखंड के पारंपरिक भूभाग में आते है. बुंदेलखंड की विडंबना है कि एक सांस्कृतिक और सामाजिक एकरूप भौगोलिक क्षेत्र होने के बावजूद यह दो राज्यों मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश में बंटा हुआ है. आजादी के बाद एक वक्त ऐसा भी आया जब राई खतरे में थी. इसके खिलाफ आंदोलन चले, इसे अश्लील माना गया. कई बार राजनेताओं की आलोचना हुई कि वे राई देख रहे थे, अब लोकोत्सवों में भी राई कभी-कभार ही देखने को मिलती है.

ऐसा माना जाता रहा कि राई दैहिक श्रृंगार का नृत्य है. नृत्य में देह ही नाचती है आत्मा नहीं. जबकि इसके पारंपरिक गीत देखें तो इसमें वैराग्य है, आस्था है, धर्म है, सौंदर्य भी है, लास्य है व गति है. राई के बोल में, ईसुरी की चौकड़ियां ही सर्वाधिक गाई जाती हैं. ईसुरी प्रेम, दैहिक श्रृंगार के उत्कट कवि के रूप में सम्मानित बुंदेलखंड के कंठकंठ में विराजे कवि हैं. उन्हें बारहों मास फगुनाया कवि कहा जाता है. फागुन में अनेक गांवों में राई के आयोजन होते हैं. फाग श्रृंगार और प्रेम का रंगोत्सव है. यह वर्जनाओं-कुंठाओं से मुक्ति का पर्व है. फाग के अलावा संपन्न वर्ग शादीब्याह, जन्मदस्टोन के अवसर पर भी राई करवाते हैं. मरणासन्न के लिए महामृत्युंजय जाप की तरह राई का आयोजन आयुष्यवर्धक माना गया है. एक राई गीत है 'मुंह में नइयां दांत, बब्बा सेज को बिराजे.'

बुंदेलखंड में राई नृत्य करने का पारंपरिक कार्य बेड़िया समाज का है. इसके मर्द सामान्यतया निठल्ले होते हैं. परिवार के भरण-पोषण की जिम्मेवारी स्त्रियों की होती है. इसके लिए परिवार की कम से कम एक बेटी को अविवाहित रखने की प्रथा रही है. वही नचनारी बनती है. राई के लिए नचनारी को उसके गांव जाकर 'साई' देकर न्योतना पड़ता है. नियत तिथि पर वह अपने संगतकारों के साथ आ जाती है. वह चूड़ीदार पायजामा पर लहंगा-चोली पहने होती है. नृत्य में उसका मुख ओढ़नी से ढका रहता है. नयनबाणों से न तो वह किसी को घायल कर सकती है और न ही अंग प्रदर्शन से उत्तेजित. वह पद और हस्त संचालन के जरिए ही श्रृंगारिक मुद्राओं को अभिव्यक्त करती है.

राई दममारु नृत्य है, पूरी रात चलता है. मिरदंगिया और नचनारी की छेड़-छाड़, मानमनुहार के बीच अनेक

श्रृंगारिक मुद्राएं दर्शनीय होती हैं. राई में गाए जाने वाले गीतों की दो या चार पंक्तियां ही होती हैं. इसके कुछ गीत ये हैं 'तुम पे लाखों मरे, तुम नै मरीं बेला काऊ पे.' 'राजा हाथ न लगाओ, जोबन से महंगी है चोली.' राई में गाये जाने वाले गीतों में खयाल, स्वांग, फाग, नाारदई और लग्गर आदि विविधताएं हैं जो गायन की द्रु त, मध्यम आर विलंबित गति के साथसाथ विभिन्न रागों व लोकरागों में ढले होते हैं. इसके धार्मिक गीतों में सरल, सहज और लोकसम्मत भाशा में प्रभु की सत्ता का बखान होता है जैसे

वीर हनुमान, अरे वीर हनुमान, लंका में गरदा उड़ाई रे

या फिर

'सखी सौलह हजार, सखी सौलह हजार,
उसमें कन्हैया अकेले
बंसी ऊसेई बजाओ बंसी ऊसेई बजाओ,
जैसी बजाई थी वन में'

गीतों में श्रंगार, विरह, छेड़-छाड़, ताने-बहाने सबसे ज्यादा लोकप्रिय हैं

'गोरी नैना ना मार, गोरी नैना ना मार
भरके दुनाली चाहे मार दे'.

हास-परिहास के माध्यम से लोकरंजन, जीवन की विपदाओं, कष्टों और बाधाओं के बीच ये गीत और इसके साथ की थिरकन ग्रामीणों को तकलीफों को जीने की उर्जा प्रदान करते हैं.

यह भी सही है कि राई गीतों में समय के साथ कुछ अश्लीलता और द्विअर्थी संवाद आ गए हैं जो सभ्य समाज में अस्वीकारता का भाव पैदा करते हैं. बाजार की छाया ने इसे पारंपरिक स्वरूप और भावना को कतिपय पथ विमुख भी किया है, लेकिन इसके अनूठे तत्व अन्यत्र कहीं नहीं मिलते. आज इसमें हारमोनियम, बैंजो जैसे वाद्य इस्तेमाल हो रहे हैं लेकिन इनके सवालजवाब जैसे हिस्से आज भी लोगों को अचंभित कर देते हैं.

प्रश्न : भौंरी बेईमान. भौंरा बिलमाए लय बगीचन में.

उत्तर : भौंरा काय न भये, कलिनकलिन रस लेतं.

या फिर

प्रश्न : उरिया को पानी बड़ेरी लों जाय. छैला की यारी अबे लों में पाय.

उत्तर : पापर को पत्ता डुलत नईयां. इन यारों की यारी मिटत नईयां.

उसके बाद तेज गति में नगड़िया बजती है, गीत भी तेज हो जाता है

ई गारी तो आवे गोलाई दे के और ऐसे ठलुअन को मारे मिठाई दे के, नैना बंद लागे अईअई ओ.

बुंदेली लोकनृत्य राई में बेड़नियों द्वारा फुर्ती के साथ रेंगड़ी, झमका, ढोलकी, मृदंग, नगडिया, झांझ और झींके जैसे वाद्ययंत्रों के समवेत तालों पर नृत्य किया जाता है. दीपावली के बाद प्रारंभ होकर आठ माह तक चलने वाला यह नृत्य रात में होता है. राई नृत्य की समय सीमा तय नहीं है. नृत्यकारा की क्षमता ही पैमाना मात्र है, कभी-कभी राई नृत्य 22-24 घंटे तक लगातार चलता है और बड़े लोगों में शादी विवाह की रस्म इसके बिना अधूरी मानी जाती है.

इस नृत्य में लोग एक घेरा बनाकर खड़े हो जाते हैं. बीच में ग्राम्य नर्तकी ख्याल नामक गीत गाते हुए चक्राकार नाचती है

और मयूर की भांति रहरहकर अंगड़ाई लेती है. पुरुष ढोलकी बजाता है और यही ढोलकिया नर्तकी के साथ विशेष रंगत पैदा करता है. राई नृत्य मणिपुरी में जैगोई नृत्य के भांगी, पारंग से काफी साम्य रखता है. इस प्रकार राई शब्द राधिका से आया है और राधिका के नृत्य से राई नृत्य बना जिसमें केवल राधा ही कृष्ण को रिझाने के लिए नृत्य करती हो. कालांतर में इस नृत्य में गाया जाने वाला गीत राई कहलाने लगा.

मगर दूसरे विद्वान इसे विशुद्ध रूप से आदिवासी नृत्य मानते हैं. चूंकि यह नृत्य मशाल की रोशनी में होता था और मशाल को बुझने न देने के लिए इसमें राई डाली जाती थी, इसीलिए यह राई नृत्य कहलाया. राई का सबसे मनोरंजक व अनूठा पक्ष है वाद-विवाद. वाद्य बजाने वाले को जवाब देते हैं नर्तकी के घुंघरू. स्वर को जवाब देते हैं नर्तकी के बोल. अब तो बिजली की चमकदमक में यह होता है, वरना पहले दल के साथ गति से मशाल चलती थी, ताकि नर्तकी के हावभावों को लोग देख सकें.

बेड़नियां यह नृत्य करते हुए, अपनी शरीर को इस प्रकार लोच और रूप देती हैं कि बादलों की गड़गड़ाहट पर मस्त होकर नाचने वाले मोर की आकृति का आभास मिलता है. इसका लहंगा सात गज से लेकर सत्तरह गज तक घेरे का हो सकता है. मुख्य नृत्य मुद्रा में अपने चेहरे को घूंघट से ढंककर लहंगे को दो सिरों से जब नर्तकी अपने दोनों हाथों से पृथ्वी के समानांतर कंधे उठा लेती है, तो उसके पावों पर से अर्द्ध चंद्राकार होकर, कंधे तक उठा यह लहंगा नृत्यमय मयूर के खुले पंखों का आभास देता है. नृत्य में पद संचालन इतना कोमल होता है कि नर्तकी हवा में तैरती सी लगती है.

इसमें ताल दादरा होती है. पर अंत में कहरवा अद्धा हो जाता है साथ में पुरूष वर्ग लोग धुन गाता है. नृत्य की गति धीरेधीरे तीव्र होती जाती है. राई में ढोलकिया की भी विशिष्ट भूमिका होती है. एक से अधिक ढोलकिए भी नृत्य में हो सकते है. ढोलकिए नाचती हुई नर्तकी के साथ ढोलक की थाप पर उसके साथ आगे-पीछे बढ़ते हैं, बैठते हैं, चक्कर लगाते हैं. नृत्य चरम पर होता है तो ढोलकिया दोनों हाथों के पंजों पर अपने शरीर का पूरा बोझ संभाले हुए, टांगें आकाश की ओर कर, अर्द्धवाकार रेखा बनाकर आगेपीछे चलता है. इस मुद्रा में इसे बिच्छू कहा जाता है. राई नृत्य में नर्तकी की मुख्य पोशाक लहंगा और ओढ़नी होती है वस्त्र विभिन्न चमकदार रंगों के होते हैं. दोनों हाथों में रूमाल तथा पांवों में घुंघरू होते हैं. पुरूष (वादक) बुंदेलखंडी पगड़ी, सलूका और धोती पहनते हैं. राई के मुख्य वाद्य ढोलक, डफला, झींका, मंजीरा, तथा रमतुला हैं.

बुंदेल खंड की लोकजन संस्कृति में सामाजिक तथा जातीय गुणों को पेशेवर तरीके से सामाजिक परिवेश में जोड़ने के लिए विभिन्न नृत्यों की परंपरा विद्यमान है. सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तन के दौर में संक्रमण काल से गुजर रहें बुंदेली भूभाग में लोक नृत्य अब विलुप्ति की कगार पर पहुंच गये है. बुंदेली लोक नृत्य परंपराओं को बचाने के लिए समय रहते ध्यान नहीं दिया गया तो यह नष्ट हो सकती है या फिर विलुप्त. हालांकि म.प्र. शासन के संस्कृति विभाग ने राई को लोकनृत्य शैली के तौर पर मान्यता दी है. आकाशवाणी व दूरदर्षन में इसका आयोजन हो रहा है. लेकिन जरूरत इस बात की है कि गैर बेडिया समाज भी इस कला को सीखे, इसे अपनाए. इस लोक नृत्य को बचाने के लिए बुंदेलखंड में ही लोक संस्कृति केन्द्र की स्थापना जरूरी है तभी बुंदेली लोक गीत नृत्य, तथा लोक वाद्य सुरक्षित और संरक्षित रह सकेगें.

लक्ष्मी - उलूक संवाद

संजीव जायसवाल 'संजय'

अपनी गर्दन को पंखों में छुपाये उल्लू गहरी नींद का आनंद ले रहा था तभी लक्ष्मी जी ने आवाज लगायी, ''वत्स, उठो! अपने पंखों को झाड़-पोंछ लो. दीपावली निकट आ रही है हमें पृथ्वी लोक के भ्रमण पर चलना है.''

''देवी, जाइए लंबी तान कर सो जाइए और मुझे भी चैन की नींद सोने दीजिये. पृथ्वीलोक जाने की कोई आवश्यकता नहीं है', उल्लू कुनमुनाया.

''कैसी बातें करते हो वत्स, दीपावली पर पृथ्वीलोक का भ्रमण कर मनुष्यों की दरिद्रता दूर करने की हमारी प्राचीन परंपरा रही है. उसमें व्यवधान उचित नहीं है'', लक्ष्मी जी ने समझाया

''परम्परा क्या खाक है'', उल्लू ने आखें तरेरीं, फिर अपने स्वर को थोड़ा नम्र बनाता हुआ बोला, ''दो बातें मैं अनादिकाल से देख रहा हूं. पहली यह कि आप मुझसे चक्कर तो पूरे पृथ्वीलोक का कटवाती हैं लेकिन आखिर में निवास किसी भारतवासी के घर में ही करती हैं.''

''क्योंकि भारतवर्ष की शस्यश्यामला भूमि अत्यंत पतितपावन है. इसीलिये वह अन्य देवताओं की तरह मुझे भी प्रिय है-, लक्ष्मी जी उल्लू की बात काटते हुए मुस्कुराईं.

''पावन' कितनी है यह तो नहीं जानता मगर 'पतित' होने की गारंटी तो मैं भी ले सकता हूं-, उल्लू ने अपनी आखें मिचमिचायीं फिर बोला, ''दूसरी बात यह कि आप जिस भारतवासी के यहां निवास करती हैं उसके यहां आगे-पीछे इन्कमटैक्स, ई.डी. या सी.बी.आई. का छापा जरूर पड़ता है. इसलिये सीधे उसी के घर चलिए, पूरे पृथ्वीलोक का चक्कर काटने से क्या फायदा?''

''व्यर्थ के तर्क मत करो. हम अपनी परंपराओं को नहीं तोड़ सकते. दीपावली की रात्रि मैं पूरी पृथ्वी का चक्कर काट किसी सुपात्र भारतवासी का चयन करूंगी फिर उसके यहां निवास अवश्य करूंगी'', लक्ष्मी जी का स्वर कड़ा हो गया.

''उसके लिये मैं यहीं बैठे-बैठे सारी व्यवस्था कर देता हूं. बेकार की दौड़भाग करने की जरूरत ही नहीं है'', उल्लू ने कहा.

''कैसी व्यवस्था?''

''जिन-जिन भारतवासियों के यहां छापा पड़ चुका है या पड़ सकता है उनकी लिस्ट मैं यहीं मंगवाये देता हूं. आप उसमें से अपने पसंदीदा व्यक्ति का नाम शार्टलिस्ट कर लीजयेगा फिर सीधे उसी के घर चलते हैं'', उल्लू ने समझाया.

''तुम यहीं बैठे-बैठै भारतवर्ष से लिस्ट मंगवा लोगे ?'' लक्ष्मी जी आश्चर्य से भर उठीं.

''देवी, यह तो कुछ नहीं. अगर कोई और काम हो तो बतलाईये. भारतवर्ष की सारी व्यवस्था आजकल अपने ही भाई-बंधुओं के हाथों में है'', उल्लू जीवन में पहली बार मुस्कराया.

''नहीं-नहीं मुझे और कोई काम नहीं, तुम बस लिस्टें मंगवा दो'', लक्ष्मी जी ने कहा.

उल्लू ने अपना मोबाईल निकाला. उस पर मैसेज टाईप किया 'प्लीज सेंड द लिस्ट ऑफ़ वुड बी, शुड बी एंड कुड बी छापा विक्टिम्स टू लक्ष्मीदेवी.ब्रहांडमेल.डाट काम. उस मैसेज को अपने शुभचिन्तकों को फारवर्ड करने के बाद वह लंबी तान कर सो गया.

लक्ष्मी जी को उल्लू की बातों पर भरोसा तो नहीं हो रहा था मगर वह भी अपने निवास पर वापस लौट गईं. बहुत मुश्किलों से रात कटी. अगली सुबह जब उन्होंने अपना ईमेल खोला तो पूरा मैसेज बाक्स भरा हुआ था. सभी मैसेज का सब्जेक्ट एक ही था 'वुड बी, शुड बी एंड कुड बी छापा विक्टिम्स. लक्ष्मी जी ने एक मैसेज को क्लिक किया. अगले ही पल सरकारी कर्मचारियों की लिस्ट खुल गयी. लक्ष्मी जी माऊस ब्राउज करने लगीं. ब्राउज करतेकरते उनकी कलाई दुखने लगी किंतु लिस्ट खत्म होने का नाम ही नहीं ले रही थी. खीज कर उन्होंने 'कट्रोल एंड'का कमांड टाईप कर दिया. कर्सर झट से लिस्ट के आखिर में पहुंच गया. पूरी लिस्ट एक करोड़ से ज्यादा नामों की थी.

''ओ माई गॉड, इतनी लंबी लिस्ट पढ़नी पड़ेगी'', लक्ष्मी जी ने माथे पर छलक आये पसीने को पोंछते हुये दूसरे मैसेज को क्लिक किया. उसमें भारतवर्ष के 640 जिलों के फोल्डर अटैच्ड थे. उन्होंने एक जिले के फोल्डर को क्लिक किया तो उसमें 12,420 एन.जी.ओ. के नाम लिखे थे.

''ओ माई गॉड, एक-एक जिले में इतने एन.जी.ओ. हैं तो पूरे भारतवर्ष में कितने होंगें ?'' लक्ष्मी जी ने घबराते हुये तीसरी फाईल को क्लिक किया. उसमें डाक्टरों के नाम अंकित थे. कुल संख्या 8,40,130 थी.

''ओ माई गॉड! चिकित्सा जैसे पवित्र पेशे के लोग भी छापेमारी की जद में आ गये'', लक्ष्मी जी की घबराहट कुछ और बढ़ गई. कांपते हाथों से उन्होंने अगले मैसेज को क्लिक किया. उसमें स्टेटवाईज शिक्षकों की सूची अटैच्ड थी. कुल जमा 12 लाख से उपर नाम थे.

''ओ माई गॉड! गुरू ब्रहा गुरू विष्णु, गुरू देवो महेश्वरा वाले देश में गुरू भी काली कमाई के फेर में पड़ गये'', लक्ष्मी जी हांफने सी लगीं. इतने नामों में से पात्र व्यक्ति का चुनाव कर पाना पृथ्वीलोक का चक्कर काटने से कहीं ज्यादा कठिन था. वे ईमेल बंद करने जा ही रही थीं कि तभी उनकी द्रष्टि अगले मैसेज पर पड़ गयी. उस पर सुनहरे अक्षरों में लिखा था 'लीडर्स फ्राम इंडिया'.

यह लिस्ट तो बहुत छोटी होगी. चलो इसे भी देख लिया जाये. सोचते हुये लक्ष्मी जी ने उस मैसेज को क्लिक कर दिया. उन्हें भारतवर्ष के नेताओं की ईमानदारी पर बहुत भरोसा था. फाईल खुल गयी. लक्ष्मी जी का अंदाजा सही निकला. वह लिस्ट बहुत छोटी थी. एक पेज पर बस चंद नेताओं के नाम दर्ज थे.

''थैंक गॉड! कुछ तो अच्छा दिखा'', लक्ष्मी जी ने राहत की सांस ली. तभी उनकी दृष्टि उस लिस्ट के नीचे लिखे नोट पर पड़ गयी. उसमें बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा था 'नेताओं की लिस्ट बहुत बड़ी है. उसे इतनी जल्दी बना पाना संभव नहीं है. इसलिये केवल उन नेताओं की लिस्ट भेजी रहा है जिनके यहां छापा पड़ने की फिलहाल संभावना नहीं है. बाकी आप स्वयं समझदार हैं.'

'ओ माई गॉड'', लक्ष्मी जी के मुंह से एक बार फिर वही तीन शब्द निकले और वे बेहोश हो गईं. ■

मैथिलीशरण गुप्त

साधारण व्यक्ति, असाधारण लेखनी

डा. अंजलि गुप्ता

बचपन से दद्दा जी की कविताएं अपने हिंदी पाठ्यक्रम में पढ़ती रही. उनकी कविताओं में एक ऐसी सहजता, एक ऐसा आकर्षण था कि वे अनायास ही मानस पटल पर स्वत: अंकित होकर कंठस्थ हो जाया करती थीं. चाहे वह 'मां कह एक कहानी हो', 'चारु चंद्र की चंचल किरणें' हो, 'नर हो न निराश करो मन को' या 'सखी वे मुझसे कह कर जाते'. उनकी हर कविता से बाल मन हमेशा जुड़ता रहा. अर्थ की गहराई तक भले ही न पहुंच पाती लेकिन पढ़ने के बाद यही लगता था कि दद्दा अद्भुत कवि हैं, असाधारण व्यक्तित्व हैं और कोई दिव्य पुरुष भी. प्रारब्ध कहें या संयोग, सदा ही उनके बारे अधिक जान लेने की उत्कंठा बनी रही और समय चक्र ने जब मुझे उनकी ही पौत्र वधु बनाया तो वो छाप और गहरी और अमिट होती चली गई.

जब मैंने उनकी जन्मस्थली और कर्मस्थली की रज को अपने माथे से लगाया और उनकी विरासत को खुद हाथों से छुआ और महसूस किया, उनके बारे में और जाना तब लगा कि दद्दा मेरी कल्पनाओं से कहीं बहुत ऊंचे थे. ऐसे दिव्य पुरुष जिनका व्यक्तित्व जितना सहज, सरल और साधारण था उनकी लेखनी उतनी ही विस्तृत और असाधारण.

1314 वर्ष की आयु रही होगी मेरी जब मैंने उनकी पंक्तियां 'अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी,आंचल में है दूध और आंखों में पानी' पढ़ीं, उस समय मुझे उनकी नारी वादी संकीर्ण सोच पर थोड़ा असमंजस हुआ. दद्दा जी क्या और कोई कवि भी ऐसा लिखता तो मुझे ये स्वीकार्य ना होता लेकिन जब ये समझने लायक हुई कि ये पंक्तियां उन्होंने किस संदर्भ में लिखी हैं तो मन उनके प्रति नतमस्तक हो गया. नारी संवेदनाओं और करुणा की दो पंक्तियों में इतनी सटीक व्याख्या शायद ही किसी अन्य कवि ने की हो और शायद कोई आज तक कर भी नही पाया.

दद्दा जी ने नारी को जिस पूज्य भाव से अपने साहित्य में स्थान दिया वो उस समय के रूढ़िवादी परिवारों के लिए विचित्र था लेकिन दद्दा ने इस मानसिक संकीर्णता से न केवल अपने परिवार को निकाला बल्कि समाज को उबारने का भी प्रयत्न किया. दद्दा ने अपने साहित्य में नारी को सदा उच्च स्थान देकर उनकी त्याग तपस्या और करुणा को बहुत ही संवेदनशील तरीके से उकेरा.

'साकेत' में उर्मिला का त्याग दिखाया है तो 'यशोधरा' में गौतम बुद्ध के वनगमन के बाद उसकी व्यथा. 'विष्णु प्रिया' में चैतन्य महाप्रभु की धर्मपत्नी विष्णु प्रिया की निष्ठा, तपस्या और त्याग को. दद्दा जी के पिता वैष्णव धर्मी थे, वे भक्ति पद गाते और लिखते थे लेकिन बालपन में ही दद्दा ने ये समझ लिया था कि इन भक्ति पदों से तत्कालीन वास्तविक उद्देश्यों की पूर्ति नहीं हो सकती थी.

दद्दा ने जब लिखना शुरू किया तब हिंदी कविता एक नया मोड़ ले रही थी. देश भी अंग्रेजों की दासता में जकड़ा हुआ था. वो दौर एक तरह का संक्रमण काल था. उस समय जब खड़ी बोली ब्रज भाषा के घटकों से निर्मित थी, दद्दा ने तब आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी के संरक्षण में खड़ी बोली में लिखने का बीड़ा अपने कंधों पर उठाया. हम कह सकते है कि हमारे कवियों की पीढियां उनके कंधों पर चढ़कर ही आगे बढ़ी हैं. वो खुद को जयकारा लगाने वाला बोलकर लिखते भी हैं 'जो पीछे आ रहे उन्हीं का मैं आगे का जय जय कार'.

सन 1912 में उनकी कालजयी रचना 'भारतभारती' का प्रकाशन हुआ. भारत भारती से ब्रिटिश हुकूमत भी थर्रा गई थी, उस पर पाबंदियां लगा दी गईं, लेकिन वो रुकने की बजाए जनजागरण की हुंकार बनी.

'मानस भवन में आर्यजन जिसकी उतारें आरती

भगवान ! भारतवर्ष में गूंजे हमारी भारती.

हो भद्रभावोद्भाविनी वह भारती हे भवगते !

सीतापते ! सीतापते ! ! गीतामते ! गीतामते ! !

'हम कौन थे क्या हो गए और क्या होंगे अभी' से अपने गौरवशाली अतीत ,गुलामी की जंज़ीरों में जकड़े हुए भारत

और भविष्य की चिंता के बारे में चेताया और स्वतंत्रता संग्राम के लिए जोश भरा. उस समय सामाजिक एवं धार्मिक पुनुरुत्थान के जो प्रयास राजा राम मोहन राय, स्वामी दयानंद सरस्वती एवं महर्षि रवींद्र नाथ ठाकुर ने किए थे उन्हें सांस्कृतिक एवं साहित्यिक धरातल पर उतारने का श्रेय राष्ट्रकवि दद्दा को है. दद्दा के व्यक्तित्व का निर्माण धर्म, साहित्य, कला और मानवता के पंचतत्वों से हुआ था और यही आचरण उनके काव्य और उनके स्वयं के व्यक्तित्व में झलकता रहा. सामान्य मानव को उन्होंने ईश्वर से युक्त करने की चेष्टा कर 'साकेत' में आराध्यदेव राम के माध्यम से कहा भी है

'भव में नव वैभव प्राप्त कराने आया,

नर को ईश्वरता प्राप्त कराने आया.

संदेश यहां मैं नहीं स्वर्ग का लाया,

इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया.'

पूजनीय महादेवी वर्मा दद्दा को भाई मानती थीं. उन्होंने लिखा है, 'दद्दा वर्षों बाद भी ऐसे ही रहेंगे और हर भारतीय उनमें अपने आपको पाएगा. उनकी संवेदनशीलता, उनके आचरण की पवित्रता, उनकी उन्मुक्त निश्छल हंसी और

उनके कोमल स्वभाव के साथ विपरीत परिस्थिति में भी स्थिरता सदा याद रहेगी'.

सन 1936 में हुए काशी अभिनंदन समारोह में दद्दा को राष्ट्रपिता महात्मागांधी ने मैथिलीमान ग्रंथ भेंट करते हुए कहा था कि राष्ट्र ने मुझे राष्ट्रपिता बनाया है और इन्हें राष्ट्रकवि. उन्होंने कहा था, 'सच्चा कवि स्तुतिनिंदा से परे होता है. वह तो, जब प्रभु स्फूर्ति देता है तभी उसकी वाणी से काव्य की अमृत धारा बहती है.' दद्दा को किसी की निंदा सुनना तो दूर स्वयं अपनी स्तुति भी उन्हें पसंद नहीं थी.

ऐसा कोई भी धर्म या काल नहीं है जिस पर दद्दा की कलम न उठी हो. वैदिक काल में जाएं तो उन्होंने 'नहुष' की रचना की है, बौद्धकाल में 'यशोधरा', राम और रामायण की आराधना में लीन होकर राम और अन्य पात्रों को नए रूप में चित्रित किया और महाकाव्य 'साकेत' और 'पंचवटी' जैसी कालजयी रचनाएं दीं. महाभारत काल में जाकर उन्होंने 'जयद्रथ वध', 'जय भारत' जैसी कृति रच डाली. इनके अलावा हर काल पर चाहे वह 'विष्णुप्रिया' हो, 'गुरुकुल' (सिक्ख गुरुओं पर) हो, मोहम्मद साहब पर 'काबा और कर्बला' हो, कार्लमार्क्स की पत्नी जैनी पर कविता हो, राजपूत काल पर 'सिद्धराज' हो, हिन्दू, स्वदेश संगीत, वन वैभव,अंजलि और अर्ध्य के साथ-साथ भारत भारती जैसी कालजयी हमें दीं. इसलिए वे हमारी जातीय अस्मिता के और हिंदी के संरक्षक और वर्तमान के सबसे बड़े कवि हैं. ऐसा कवि ही राष्ट्रकवि हो सकता है जिसकी लेखनी में कोई एक प्रदेश नहीं बल्कि पूरा देश बोलता हो.

दद्दा ने इतने विस्तृत लेखन के साथ ही अनुवाद कार्य भी किया और वो भी किसी एक भाषा में न होकर बंगला,संस्कृत एवं मराठी भाषा में और ये भाषाएं भी उन्होंने स्वाध्याय से ही सीखीं. आज भी चिरगांव स्थित उनके पुस्तकालय में बंगला सहित अनेक भाषाओं का विशाल संग्रह है. 1952 में जब स्वाधीन भारत के संविधान के अंतर्गत हुए प्रथम आम चुनावों के बाद पहली संसद बनी तो राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत देश भर के 12 विशिष्ट व्यक्तियों में एक नाम दद्दाजी का भी था. इसे हमारे राष्ट्र का सौभाग्य ही कहा जायेगा कि राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जैसे जन मानस के कवि का सानिध्य सन 1964 तक राज्य सभा को प्राप्त हुआ. उन्होंने राज्यसभा के सदस्य के रूप में और आजीवन हिंदी को राजभाषा बनाने के लिए संघर्ष किया. 4 मई 1963 को राज भाषा विधेयक पर उनके उदगार उनकी इन्हीं भावनाओं को व्यक्त करते हैं

'भले योजनाएं कितनी ही चलीं और चल रहीं बड़ी,

किंतु राष्ट्र भाषा तपस्विनी यहां जहां थी वहीं पड़ी.'

वो ये भी लिखते हैं

'सबकी भाषाएं समृद्ध हों, हिंदी है मेरी भाषा

हिंदी का उद्देश्य यही है भारत एक रहे अविभाज्य.' ■

मुट्ठी भर प्यार

सुधा गोयल

'धरा मम्मी गुजर गयीं. पापा के कहने पर मैंने तुम्हें सूचना दे दी है. मैं निकल रही हूं अभी', सुबकते हुए बुआजी ने बताया.

मैं उन्हें एक शब्द भी नहीं बोल पाई. बुआजी ने सूचना देकर फोन फौरन काट दिया. इतना पूछने की गुंजाइश ही नहीं छोड़ी कि ऐसा कब और कैसे हुआ? बुआजी को अपनी मम्मी से प्यार है तो क्या मेरा अपनी दादी मां से नहीं. बुआजी ने दादाजी के आदेश का पालन करते हुए मुझे मात्र सूचना दी है. बाकी मेरी मर्जी कि मुझे क्या करना चाहिए और क्या नहीं.

वे मानें या न मानें, आखिर दादाजी और उनके स्नेह तंतु मुझसे भी जुड़े हैं. वर्ना क्या बुआजी दादाजी की आज्ञा की अवहेलना नहीं कर सकतीं थीं? जितना हम बुआजी के प्यार को तरसे हैं क्या उतनी ही कमी बुआजी ने भी महसूस की होगी? संबंधों में लक्ष्मण रेखाएं हमारे बीच हमारे मम्मीपापा ने खींच दीं. कारण चाहे कुछ भी रहे हों.

कितना सारा सामान हमारे लिए बुआजी लेकर आतीं. बुआजी के कोई बेटी नहीं और हमारा कोई भाई नहीं. अपने कोई तायाजी या चाचाजी नहीं. इन रिश्तों की मिठास चखते तो तब जब कोई होता. मात्र अकेली बुआजी. हर रक्षाबंधन पर दौड़ी चलीं आतीं. उमंग और नमन भैया को हमसे राखी बंधवातीं और राखी बंधाई के लिए भैया हमें सुंदर-सुंदर ड्रेसें देते जिन पर मैचिंग क्लिप, रुमाल, टाफी, चाकलेट तथा चूड़ियां रखी रहतीं.

हम बुआजी के आगे-पीछे घूमते. बुआजी अपने हाथ से हमें नहलातीं, अपना टेलकम लगातीं, खूब खुशबुएं उड़ातीं और अपनी लाई ड्रेसें पहनातीं. अपने साथ बाजार ले जातीं, आइसक्रीम खिलातीं, कोल्डड्रिंक पिलातीं. ढ़ेरों सामान से लदे हम घर में घुसते. दादी मां बुआजी को डांटती कि इतना खर्च करने की क्या जरुरत थी, इन दोनों के पास इतना सामान और खिलौने हैं फिर भी इनका मन नहीं भरता.

हम बुआजी के पीछे छिपे जाते. बुआजी मुस्करा पड़तीं 'ये हम बुआ-भतीजी का मामला है, कोई बीच में नहीं बोलेगा. मम्मी अब घर में शैतानी करने और खेलने कूदने को यही दो बच्चियां ही तो हैं. इनसे घर कितना गुलजार रहता है.'

और हम हिप हिप हुर्रे करते हुए अपना सारा सामान खोलकर सबको दिखाते. मम्मी आंखें तरेरती. हम बुआ जी से शिकायत कर देते और जब हम बुआजी के घर जाते, दोनों भैया अपनीअपनी साइकिल पर बिठाकर कभी बाजार ले जाते तो कभी पार्क में घुमाने ले जाते. कितना अच्छा लगता था सब, जैसे मुट्ठी में सितारे भर गये हों.

हम झूले पर झूलते और गाते

'बाबा,तुम चले परदेश हमको कौन बुलाएगा?

तुम चिंता मत करना हमें बुआजी बुलाएंगी,

भैया बुलाएंगे, फूफाजी बुलाएंगे.'

थोड़े बड़े हुए तो गीत के बोल ही भूल गए. मुट्ठी में बंद सितारे बिखर गए. बुआजी का बुलाना तो दूर उनका नाम तक लेने पर पाबंदी लगा दी. बुआजी और भैया आते. हम चोरी चोरी उनसे मिलने जाते. वे प्यार करतीं. उनकी आंखें नम हो आती. बुआजी हमें चाकलेट देती. हम वहीं खा लेते. मुंह साफ करते और उनके पास आ जाते. मम्मी पूंछती 'बुआजी ने क्या खिलाया?'

हम झूठ बोलते 'कुछ नहीं.'

बुआजी को गलबहियां डाल उनकी बगल में सोने का बड़ा मन करता. हम कहते, बुआजी अभी मत जाना. हम चुपके चुपके आते रहेंगे. आप आइसक्रीम खिलाना.

बुआजी आइसक्रीम और चाकलेट खरीद कर फ्रिज में रख जातीं. मम्मी-पापा ने उन्हें कभी अपने घर नहीं बुलाया. भैया से भी नहीं बोले. जबकि बुआजी अभी भी हम पर जान छिड़कती थीं. राखियां खुल गई, रिश्ते बेमानी हो गये. कैसे इंतजार करुं कि कभी बुआजी बुलाएंगी और उलाहना देंगी 'धरा और तान्या, तुम अपनी बुआ जी को कैसे भूल गयीं? कभी अपनी बुआ के घर आओ ना.'

कैसे कहती बुआजी? उनके आगे रिश्तों का एक जंगल जो उग आया था और उसके पार बुआजी आ नहीं सकती थीं. जाने ऐसे कितने जंगल रिश्तों के बीच उग आए जो वक्त बेवक्त खरोंच कर लहुलुहान करते रहे. बुआजी के एक फोन से कितना कुछ सोच गई हूं.

पल भर में मैंने स्वंय को सोचों से उबारा और अपने कर्तव्य की ओर उन्मुख हुई. तानी यानि तान्या को मैंने फ़ौरन फोन मिलाया. सुनते ही बोली 'दीदी, फिलहाल मैं नहीं निकल पाउंगी. बंगलौर से वहां पहुंचने में दो दिन तो लग ही जाएंगे. तब तक पंहुचने का फायदा भी क्या? फ्लाइट का भी भरोसा नहीं. टिकट मिलें या नहीं. ईशान भी यहां नहीं है. मैं तेरहवीं पर पहुंचूंगी, प्लीज आप निकल जाइए. आप तो पास ही हैं, दो-तीन घंटे लगेंगे. दीदी आपको खबर किसने दी? कैसे हुआ ये सब? पूछते-पूछते रोने लगी तानी.

'तानी मुझे कुछ भी नहीं पता. बुआजी का फोन आया था. कितना प्यार करती थी दादी मां. तानी, क्या हमारा जाना मम्मी को अच्छा लगेगा? क्या मम्मीपापा भी उन्हें अंतिम प्रणाम करने आएंगे?'

'नहीं दीदी, जो रिश्ते जीवन में टूट जाएं, मृत्योपरांत उनका जुड़ना या न जुड़ना बेमानी है. ये समय रिश्तों को तौलने का नहीं है. मम्मीपापा की पसंद-ना-पसंद का हमने कभी ख्याल किया? वे अपने रिश्ते आप जानें. हमें तो अपनी दादी मां के करीब उनके अंतिम क्षणों में होना चाहिए. दादी मां को अंतिम प्रणाम करने के लिए तरस रही हूं. आप दादी मां को मेरी तरफ से एक मुट्ठी फूल अवश्य चढा देना और कहना 'दादी मां, तुम्हारी नटखट तानी तुम्हें बहुत मिस कर रही है.'

मैंने फोन हर्ष के आफिस लगाया और इस दुखद समाचार से उसे अवगत कराया. उत्तर मिला 'तुम तैयार रहना, मैं पंद्रह मिनिट में पंहुच रहा हूं.'

फोन रखकर मैंने अलमारी खोली. तैयार होने के लिए साड़ी निकालने लगी. तभी दादी मां की दी हुई कांजीवरम की साड़ी पर निगाह पड़ी. मैंने छुआ, लगा मैं दादी मां को छू रही हूं. उनका प्यार मुझे सहला गया है. दादी मां के लिए सलवार सूट, जींसटॉप सब यही रखें हैं. मैं एक एक चीज पर हाथ फिराकर देखने लगी. इतना प्यार इन चीजों पर इससे पहले कभी नहीं आया था. इन सब में मुझे दादी मां का सुखद एहसास मिल रहा है.

आंखें हैं कि बही जा रही हैं. रुकने का नाम ही नहीं ले रहीं. लॉकर खोला. दादी मां की दी हुई चेन, अंगूठी, टाप्स, लौटते समय दादी मां मुट्ठी में थमा देती. एक दो बार हर्ष ने मना करना चाहा तो दादी मां की आंखें भर आईं. बोलीं 'हर्ष बेटा, इतना सा अधिकार भी तुम देना नहीं चाहते. ये प्यार और दुआ के फूल हैं, कोई भौतिक संपन्नता के प्रतीक नहीं. एक मां की आंखों में झांक कर देखो. तुम्हें कुछ देकर मुझे सुकून मिलता है. जिस दिन अभाव या कष्ट होगा नहीं दूंगी.'

'दादी मां, मुझे क्षमा करें. आपका प्यार और आशीर्वाद

हमेशा सहेज कर रखूंगा', और तभी से हर्ष दादी मां से मिले नोटों पर एक छोटा सा फूल बनाकर संभाल कर रखने लगे और मुझे भी हिदायत दी कि दादी मां के दिए रुपए खर्च न करुं.

हमें नहीं पता कि मम्मीपापा का झगड़ा दादाजी और दादीजी से किस बात पर हुआ. बस धुंधली सी याद है. उस समय मैं छः साल की थी. पापा, दादी मां से खूब झगड़े थे और उसी घर में ऊपर रहने लगे थे.

कभी मम्मी-पापा से पूछने की जरूरत नहीं पड़ी या हिम्मत नहीं हुई. कुछ दिन तक मम्मी-पापा ने हमें उनके पास नहीं जाने दिया. यदि हमें उनसे कुछ लेते देख लेते तो छीन कर डस्टबिन में फेंक देते और दादी मां को खरी-खोटी सुनाते. दादी मां ने कभी उनकी बात का जवाब नहीं दिया. वे चुप रह जातीं. हमें खूब गुस्सा आता. दादी मां इतना क्यों हैं? पर हम कर भी क्या सकते थे. हमें पापा गंदे लगते क्योंकि मम्मी-पापा हमेशा उनके बारे में गंदी-गंदी बातें करते.

जब पापा काम पर चले जाते और मम्मी आराम करने लगतीं उस समय हम यानी मैं और तानी चुपके-चुपके नीचे उतर जाते. दादी मां कलेजे से लगा लेतीं. हमारे लिए दादाजी से टाफी, चाकलेट, बिस्कुट, फल, फ्रुटी मंगवाकर रखतीं. कभी इडली, छोलेभटूरे, हलवा या पकौड़ी जैसा कुछ भी बनातीं तो हमारे लिए उठाकर रख देंती. फ्रिज में कोल्ड ड्रिंक और आइसक्रीम अवश्य होती. हम दूर से ही पापा के स्कूटर की आवाज सुनकर सब खाने का सामान वहीं छोड़कर चप्पलें हाथों में उठाए ऊपर पंहुच जाते और खेलने लगते जैसे हम नीचे गये ही न हों.

मम्मी-पापा से शिकायत करती. पापा हमें दो-दो चांटे लगाते. कान पकड़वाकर प्रोमिस कराते कि फिर नीचे नहीं जाएंगे और वहां से कुछ भी नहीं लेंगे. हम डर कर प्रामिस कर लेते लेकिन उनके घर से निकलते ही हम आंखों-आंखों में इशारा करते और अपने दोस्तों के साथ खेलने का बहाना कर दादी मां के पास पहुंच जाते. दादी मां की गोद में लेट जाते. वे हमें खूब प्यार करतीं और समझातीं, 'अच्छे बच्चे अपने मम्मी-पापा की बात मानते हैं.'

'हमें उनकी बातें समझ में नहीं आतीं.'

तानी गुस्से में कहती, 'वे आपके पास नहीं आने देते. हम तो यहां जरूर आएंगे. क्या आप हमारे दादा जी, दादी मां नहीं हो? क्या आपके बच्चे आपकी बात मानते हैं जो हम मानें?'

दादी मां के पास इस बात का कोई उत्तर नहीं होता था. बस स्नेह से गाल थपथपा कर कहतीं, 'जरुर आना. तुम दोनों बहुत प्यारी बच्चियां हो.'

दादी मां को पापा की इन बंदिशों से दुःख तो अवश्य पंहुचता होगा लेकिन वे अपना दुःख प्रकट नहीं कर पातीं थीं. हां मम्मी-पापा के लिए हमारे मन में विद्रोह अवश्य पनप रहा था. हमारे अंदर ढेरों सवाल थे. दादी मां सबको प्यार करतीं हैं. हमें भी कितना प्यार करतीं हैं. फिर मम्मी-पापा से कैसे झगड़ा कर सकतीं हैं? पता नहीं मम्मीपापा इन्हें कंजूस क्यों कहते हैं? हमारे लिए कितना कुछ करतीं हैं. इन सवालों के कहीं उत्तर नहीं थे.

दादी मां के एक तरफ मैं लेटती, दूसरी तरफ तानी और बीच में दादी मां. रोज नई कहानियां सुनातीं और पापा जब छोटे थे तब की ढेर सी बातें बतातीं. हमें बड़ा मज़ा आता.

वे दोनों कभी सुबह से शाम तक के लिए कहीं चले जाते तो हमारे पेट में दर्द होने लगता. स्कूल की बातें किसे सुनाएं. मम्मी को तो फुर्सत ही नहीं है. ज्यादा कहने पर दोचार चांटे लगा देंगी. जैसे मम्मी का तो कभी पढ़ने से वास्ता रहा ही नहीं. जो भी पढ़ातीं गलत पढ़ातीं. स्कूल में पनिशमेंट मिलती. इसी से हम दादी मां से अपनी प्राब्लम साल्व कराते.

अपनी कापियां किसे दिखाएं जिन पर तीन-तीन स्टार मिलें हैं? उफ़! नई कापी, नई ड्रेस, नई पेंसिलरबर और लंच बाक्स भी तो दिखाना है. दादा जी की जेब की तलाशी लेनी है जिसमें से कभी जैली, कभी चुइंगम और कभी टाफी मिल जाती है. दादाजी जानते हैं कि बच्चे जेबों की तलाशी लेंगे, उन्हें निराश नहीं करना है. उनके मतलब का कुछ तो मिलना ही चाहिए.

दादी मां दादाजी से झगड़तीं, 'तुमने टाफी, चाकलेट खिला खिला कर इनकी आदतें खराब कर दी हैं. ये तानी सारा दिन चीज मांगती है, फल नहीं खाती. अब आप कुछ भी नहीं लाएंगे. इसके सारे दांत खराब हो रहे हैं.'

दादा जी चुपचाप सुनते और मुस्कराते रहते. जबकि स्वयं दादी मां के पर्स में सौंफ की रंगबिरंगी गोलियां या अनारदाने के पाऊच मिल जाते. हम दादी मां का पर्स खोलकर अपने मतलब की चीजें निकाल लेते. वे हमारे पीछे भागतीं. हम भी भागते. हमें पकड़ कर दादी मां खूब हंसती और कहतीं, 'शैतानों तुमने थका डाला. मेरी सांस भी उखड़ने लगी है.'

और जब शादी पक्की हुई, दादी मां हर्ष को देखने के लिए कितना तड़पीं और जब नहीं रहा गया तो एक दिन बोलीं, 'धरा अपना दूल्हा नहीं दिखाएगी?'

'अभी दिखाती हूं दादी मां' और एक छलांग में हर्ष का फोटो लाकर उनके हाथ में थमा दिया. वे कभी मुझे देखतीं कभी फोटो को. फिर बोलीं, 'हर्ष बहुत सुंदर है. बिल्कुल तेरे अनुरुप'.

मैंने तभी हर्ष को फोन लगाया, 'दादी मां मिलना चाहती हैं, शाम तक पहुंचो.' और शाम को हर्ष दादी मां के पांव छू रहा था.

शादी में सप्तपदी के बाद मैं अड़ गयी की विदाई घर से होगी. असल में मुझे अपने दादाजी और दादी मां से आशीर्वाद लेना था. जब भी मायके जाती दादी मां सौगात के रुप में कभी रिंग, कभी कर्णफूल, कभी साड़ी मुट्ठी में दबा देती. उन्होंने कभी खाली नहीं आने दिया.

'धरा, तुम अभी तक तैयार नहीं हुईं. अलमारी पकड़े क्या सोच रही हो?'

'हर्ष, मेरी दादी मां चलीं गईं. मेरा मुट्ठी भर प्यार चला गया. अब कौन मेरी मुट्ठी में सौगात ठूंसेगा? कौन आशीर्वाद देगा? मैं अपनी दादी मां को निर्जीव कैसे देख पाऊंगी?' मैं रोने लगी.

हर्ष और धरा जब वहां पहुंचे लगभग सभी रिश्तेदार आ चुके थे. दादी मां के पास बुआजी और अन्य महिलाएं बैंठी थीं. वह बुआजी को देखकर उन्हें लिपट कर फूटफूट कर रोने लगीं. रोतेरोते पूछा, 'मम्मी-पापा?' बुआजी ने ना में गरदन हिला दी. धरा दनदनाती हुई ऊपर जा पहुंची. उसका रोदन क्षोभ बनकर फूट पड़ा,' आपको मम्मीपापा कहते हुए आज मुझे शर्म आ रही है. पापा आपने तो अपनी मां के दूध की भी लाज नहीं रखी. एक मां ने आपको नौ माह अपनी कोख में रखा, आज उसी का ऋण चुका देते. अब तो आप दादी मां को बेटे की मां बनने के अभिशाप से मुक्त करिए. और मम्मी जिसने अपना कोखजाया आपके आंचल से बांध दिया, अपना भविष्य, अपनी उम्मीदें सब आपको सौंप दीं. उन्हीं के पुत्र के कारण आप मां का दर्जा पा सकीं. एक औरत होकर औरत का दिल नहीं समझ सकीं? उन्हीं के कारण आप इस घर में आ सकीं हैं. कितने कृतघ्न हैं आप दोनों.

यदि आप अपना फर्ज नहीं निभाएंगे तो क्या दादी मां यों ही पड़ी रहेंगी? आप सोचते होंगे कि इस समय दादाजी आपकी खुशामद करेंगे. नहीं, उमंग भैया किस दिन काम आएंगे? पापा, क्या आप अपनी देह से उस खून और मज्जा को नोच कर फेंक सकते हैं जो आपको इन दोनों ने दिया? उनका दिया नाम आज तक आपने क्यों नहीं मिटाया? आपकी अपनी क्या पहचान है? आप आज भी उनके बनाए मकान में किस अधिकार से रह रहे हैं? यदि आज आप दोनों ने अपना फर्ज पूरा नहीं किया तो इस भरे समाज में मैं आपका त्याग कर दूंगी और दादाजी को अपने साथ ले जाऊंगी.'

चौंक पड़े दोनों. धरा तो कभी ऐसी नहीं थी. क्या हुआ है इसे?

'धरा, तुम्हें यहां नहीं आना चाहिए था.'

'क्यों न आती? मेरी दादी मां चलीं गईं हैं, उन्हें अंतिम प्रणाम करने का अधिकार कोई भी नहीं छीन सकता, आप लोग भी नहीं.'

'होश में आओ धरा'.

'अभी तक होश में नहीं थी पापा. पहली बार होश आया है और अब मैं सोना नहीं चाहती. आज उस मुट्ठी भर प्यार की कसम, आप दोनों नीचे आ रहे हैं या नहीं?'

धरा की आवाज में चेतावनी थी. विवश हो मम्मीपापा को नीचे आना पड़ा. ■

आओ कुछ बात करें

मृत्युंजय कुमार सिंह

आओ कुछ बात करें
थके हुए आदमी से एकांत की,
क्लांत-से इस देश की, इस प्रांत की.
आओ कुछ बात करें.

समुदाय के बिगड़े हुए नसीब की
ईसा के सलीब की,
उस पर झूलते इतिहास की,
संवेदना की लाश की.
घुटी हुई आवाज़ की
सड़े-गले समाज की,
खूनी फव्वारे उड़ाते
दानवों के राज की,
आओ कुछ बात करें.

आओ कुछ बात करें,
डूबते संस्कार की
मूल्यों से बलात्कार की,
अस्मिता को रौंदते
आचार की, व्यवहार की.
घात की, प्रतिघात की,

विश्वास पर आघात की,
मिलते गले जो द्वेष से
उन ढोंगियों की जात की.

आओ, कुछ बात करें.
जंग लगते, टूटते
अर्जुन के धनुष-वाण की,
खेत आये युद्ध में
हतभागे उन प्राण की
कायरों के हाथ
वीरता के पिंडदान की,
द्यूत में छले गए

व्यसन की, अज्ञान की.
आओ, कुछ बात करें.
बुझ गए चिराग़ की,
फूट गए भाग की,
गड़ कर भी ज़मीन में
पल रहे अनुराग की.
कुछ नए ध्येय की,
कल्पना अज्ञेय की,
दब गए जीवन में जो,
उस भावना की, श्रेय की.
आओ, कुछ बात करें.
बात करें तब तक
जब तक कि ज़ुबान है,
बात करें तब तक
जब तक कि बचे प्राण हैं.
कौन जाने कब कहां
फिर जलजला-सा आ जाए,
जीवन के प्रमाण सब
जीवन ही खा जाए.
तब होगा न कोई मुखिया
न कोई मोख्तार होगा,
कट गयी ज़ुबान से
फिर न कोई वार होगा.
अपनी ही तलवार से
जब सर कलम होंगे हमारे,
लाज से छुपते फिरेंगे
कल तलक के भाईचारे.

इसलिए है ज़रूरी,
कि हम कोई बात करें,
जीने के उपाय कुछ
फिर से ईज़ाद करें.
आओ, कुछ बात करें. ■

डा.अनीता पंडा 'अन्वी'

1.
केवल मां ही

शीत की ठिठुरन में
रजाई की गरमाहट सी,
कोहरे और धुंध में
सूरज की किरणों सी,
चाय की प्याली में
घुलती गुड़ की मिठास सी,
जगाती मनुहार कर
केवल मेरी मां.

सारे दर्द और ग़म को
छिपा प्याज के परतों में,
देने गर्म रोटियों को
भुलाती जलन हाथों की,
मेरी एक मुस्कान को
सहेज लेती आंखों में,
पूरे करने मेरे सपनों को
झिड़की समेट लेती कृपण सी
केवल मेरी मां.

बैट्री विहीन, चाभी रहित
दिन-रात घूमती घड़ी सी,
उपलब्ध है सदैव
ताजा हवा और पानी सी,
उम्मीद चुटकी भर प्रशंसा
प्राप्ति हेतु याचक सी,
मोहभंग हो तत्पर सेवा में
विमान परिचारिका सी
केवल मेरी मां.

मां बन आज
जिया है तेरा जीवन
हृदय की तिजोरी से
निसृत दर्द की धरोहर
कितनी दूर थी मां
केवल थी सुख की अभिलाषा
आज तू नहीं है फिर भी
हर पल तू है साथ
मौन हो ढांढस बंधाती
इतिहास को दोहराती
केवल मेरी मां. ■

2.
नारी तुम केवल श्रद्धा हो?

नारी तुम केवल श्रद्धा हो?
जन्म से मृत्यु पर्यन्त अस्मिता की
है अनवरत मूक तलाश
कितनी सुरक्षित हैं बेटियां?
भस्म कर देती हैं कुत्सित नजरें
नारी तुम केवल श्रद्धा हो?
हर बार छली जाती है नारी
अग्नि परीक्षा देती है नारी
बलि की वेदी उसके लिए
द्यूत का दांव-पेंच उसके लिए
नारी तुम केवल श्रद्धा हो?
शक्ति स्वरूपा तुम हो देवी
पर नहीं जन्म की अधिकारी
कानून मिला सबको समान
फिर भी न्याय का लगे गुहार
नारी तुम केवल श्रद्धा हो?
खिल उठेगा धरा-उपवन
जब बेटियां मुस्कान भरेंगी
मां का आंचल लहराएगा
जब नारी उड़ान भरेगी
नारी तुम केवल श्रद्धा हो? ■

आशा पाण्डेय ओझा

बिल्ली को मिला ज्ञान

बिल्ली बैठी कार में,
घूम रही बाजार में.
पीली उसकी ड्रेस थी,
जिसपर बढ़िया प्रेस थी.
घुंघराले से बाल थे,
और होंठ भी लाल थे.
चश्मा काला गोल था,
ज्यादा जिसका मोल था.
मोबाइल था हाथ में,
लगी किसी से बात में.
बातों में मशगूल वो,
भूली ट्रेफिक रूल वो.
आड़े फिरकर रस्ते में,
रोका ट्रेफिक दस्ते ने,
हवलदार से लड़ गई,
जिद्द पर अपनी अड़ गई.
हुई क्रोध से लाल वो,
फुला रही है गाल वो.
काट दिया चालान जब,
आया उसको ज्ञान तब. ■

जीव-जन्तुओं का
अद्भुत संसार
आइवर यूशिएल
सॉ फिश
अपने
आरानुमा
थूथन को
अगल-बगल
हिलाते हुए
छोटी
मछलियों
के समूह पर
एकदम
धावा बोलती
है और
इस तरह
घायल हुई
मछलियों को
अपना आहार
बना लेती है।
स्किमर
पक्षी
अपनी
चोंच को
पानी में डुबोये
हुए समुद्र
की सतह
के बिल्कुल
करीब उड़ता रहता है और ऐसे ही
चोंच से कोई मछली टकराती
है यह उसका
भोजन बन जाती
है।
वॉलरस
के
दो लम्बे
बाह्यदंत
होते हैं
जिनके
सहारे
यह
बर्फ खोदकर इसके
नीचे मौजूद शैलफ़िश खाता है।
रेड शैंक
पक्षी
रेत में
अपनी चोंच
धंसाकर
शैलफ़िश
ढूंढता
रहता
है।
कुछ
तितलियों
के
परवों के पिछले
भाग पर
दिखावटी
शृंगिकाएं
होती हैं ताकि
ये अपने दुश्मनों से
अपना बचाव कर सकें।

जलधि समाना बूंद में
मन में ठिठक के ठहरती कविताएं

मधु सक्सेना

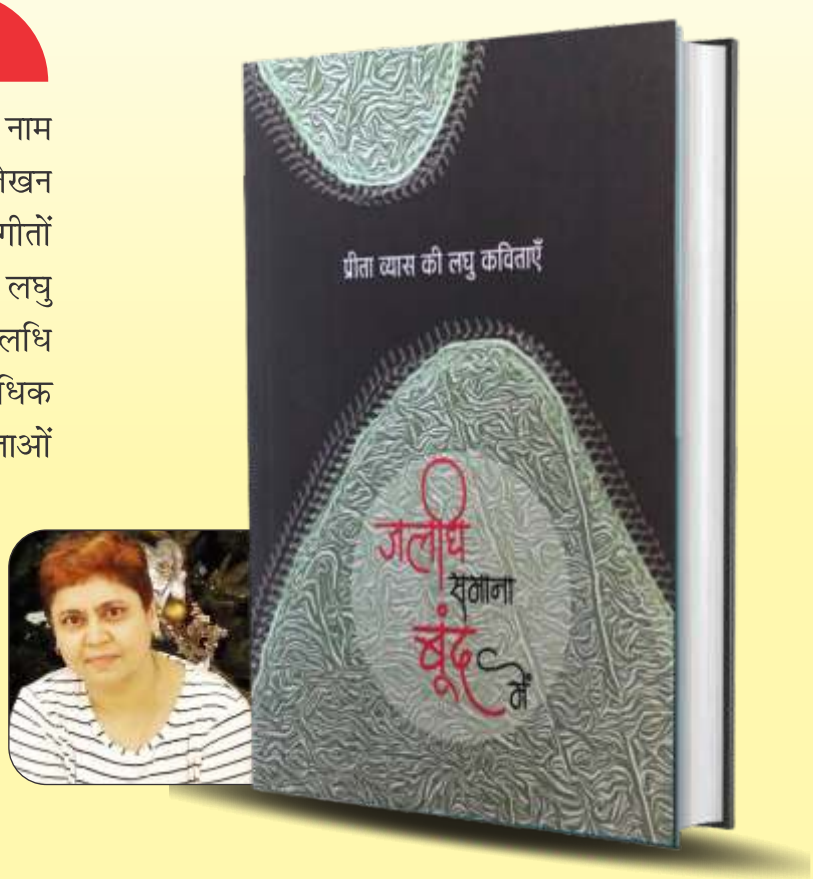

लेखन के क्षेत्र में प्रीता व्यास का नाम नया नहीं है. कई किताबों के लेखन और कई कविताओं और बाल गीतों को अपनी खनकती आवाज़ देने वाली प्रीता जी का ये लघु कविताओं का संकलन अपने नाम के अनुरूप ही 'जलधि समाना बूंद' की तरह है. जितना कहा जाता है उससे अधिक रह जाता है. उसी कहे अनकहे को छोटी-छोटी कविताओं के रूप में कह दिया प्रीता जी ने. एक उदाहरण देखें

'मैं रोई
तुमने सुना ही नहीं
तो मैंने
रोने को समेट दिया कविताओं में
तुमने कविताएं सुनी
वाह कहा
रोना फिर भी नही सुना.'

इन लघु कविताओं को पढ़ते हुए लगा हम भी कहना चाहते थे ये सब तो, पर शब्द नही थे. लगा कहीं कोयल की एक कूक सुनाई दी, सागर की एक लहर उछली, किसी एक फूल की महक आई, बांसुरी की एक तान छेड़ कर रुक गया कान्हा. ऐसी ही अधूरी सी बात की पूरी कविताएं हैं इस संग्रह में. अपनी संपूर्णता के साथ ये कविताएं मन के गहरे गह्वर में पैठ जातीं हैं.

'ईश्वर करे
तुम्हे सुंदर सपने आएं
और
उतनी ही सुंदरता से सारे सच हो जाएं.'

प्रेम, अपेक्षा, समर्पण, विश्वास, दुआ, सपने, रिश्ते, दर्द आदि के रंग अपने में समेटे ये कविताएं मन में ठिठक कर ठहर जाती हैं. पाठक कहीं खो जाता है

'बड़ा तकलीफदेह होता है
सबसे गहरे परिचित का
तब्दील हो जाना
निरे अपरिचित में.'

जीवन में प्रेम का होना ही जीवन है, करीब होना या दूर होना सब उसी के रंग हैं. प्रेम जोड़ता है बाहर और भीतर

को. यात्रा पल की, यात्रा अनंत की, यात्रा कहने-सुनने के बीच की.

'हज़ार वजहें हैं
तुमसे दूर जाने की,
और तुमसे जुड़े रहने की
सिर्फ एक प्रेम,
ये एक वजह
उन हज़ार वजहों पर भारी है.'

प्रीता जी की कविताएं लौट-लौट कर आने की बात करती हैं. रुकती हैं, बहती हैं, भटकती हैं, जो खोती हैं वही पाना चाहती हैं. जीवन भी तो ऐसा ही होता है. तभी तो ये कविताएं जीवंत लगती हैं. शहद सी घुल जाती हैं स्मृतियों में

'मेरे होठों से तुम्हारे कानों तक
बस इतनी सी यात्रा करनी थी
प्रेम में उमड़े शब्दो को
कागज़, कविता, गाथा, ग्रंथ
जाने कहां कहां भटकते फिरे.'

मन के कोमल अहसासों को प्रकृति के साथ भी जोड़ देती हैं. हर दर्द को दवा लगाने के भाव से अछूती नही रहतीं ये. कवयित्री के मन के कोमल भाव हर रंग में बिखरते हैं और मुठ्ठी में भी सिमट जाते हैं

'पर्वतों को
बड़े हौले से
छू रहा है कोहरा
फाहा रख रहा हो जैसे घाव पर.'

ऐसी ही बहुत सी नन्ही नन्ही कविताएं अपने पैरों में भावों की पायल पहन ठुमकती रहती है जिसकी झनकार मात्र से पाठक विभोर हो जाता है.

बहुत सी बधाइयां प्रीता जी को. उनका लेखन पाठक के हृदय को प्रेम और शांति से भरता रहे यही दुआ है.आभार बोधि प्रकाशन का जिन्होंने इन कविताओं को समेट कर आकर्षक कवर और छपाई के साथ हम तक पहुंचाया. ■

काव्य संग्रह 'जलधि समाना बूंद में' से प्रीता व्यास की दो कविताएं

1.

मैं युद्ध का परिणाम हूं
सुंदर था, अब ध्वस्त शहर हूं
मुझ पर अपनी संवेदना के
शब्द, भाव, आंसू, फूल
कुछ भी रखने से पहले सुनो
मेरी अंतिम इच्छा है
कि दुनिया भर से
हथियार और सेनाएं
समाप्त कर दी जाएं.

2.

कंक्रीट के बीच
ज़रा सी दरार मिल जाये
उग पड़ती है
पूरी धज से,
बड़े से बड़ा तूफ़ान
गुज़र जाए
ज्यों की त्यों रहती है,
हिम्मत तो तुम मुझे
घास -सी देना प्रभु. ■

UNLOCK
YOUR FINANCIAL POTENTIAL
with Global Finance

global finance
your best interest since 1999

Winner of 50+ industry awards

We're the Piece that allows you to navigate Your Finances with Ease and Provide Comprehensive Solutions for Mortgages, Personal Risk Insurance, Business, and Commercial Loans.

Join Global Finances' referral campaign for a chance to win a share of $4000 worth of travel! This is your opportunity to travel, create unforgettable memories and share amazing experiences with your loved ones.

The first prize is a whopping $2500 worth of travel, the second prize is $1000 worth of travel, and the third prize is $500 worth of travel.

Not only are you entered to win a share of the prize pool, if your referrals convert to successful for GFS business, you'll also receive $250 for every referral*.

HOW CAN YOU PARTICIPATE?

Its easy! Simply refer Global Finance to your friends and family before 30th November 2023. The more people you refer, the higher your chances of winning.

Contact:

NORTH SHORE BRANCH

9C Apollo Drive, Rosedale

P | 09 255 5591
M | 027 755 5531

E | info@globalfinance.co.nz
W | www.globalfinance.co.nz

1st PRIZE	2nd PRIZE	3rd PRIZE	
$2500 travel gift card	$1000 travel gift card	$500 travel gift card	$250 per *Referral per Customer T&C's apply

इस तिमाही का चित्र

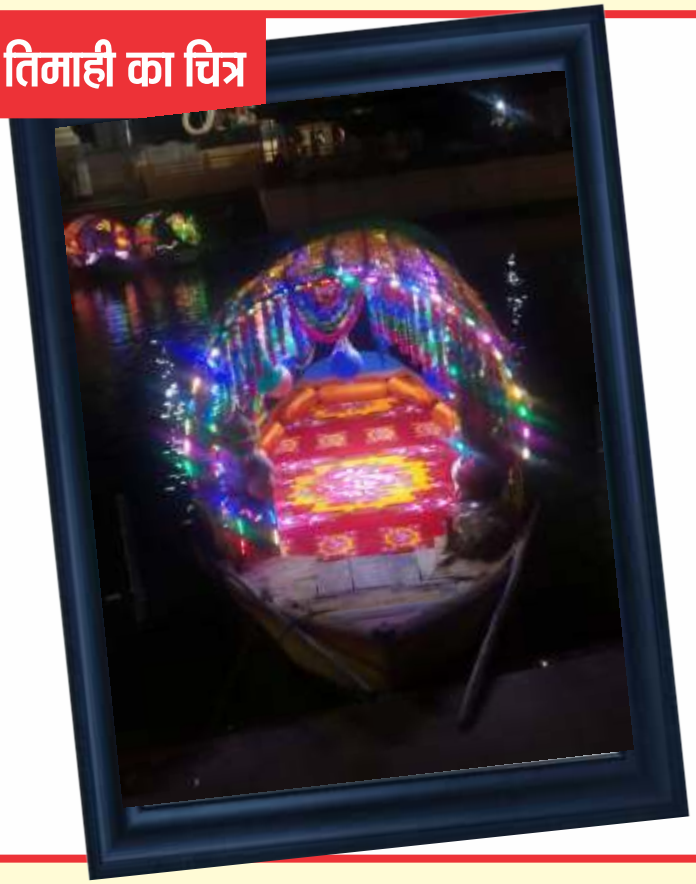

विनोद मिश्र सुरमणि

विनोद मिश्र जाने माने लेखक, संगीत विद और कलाकार हैं. बुंदेलखंड की लोक संस्कृति, चित्रांकन शैली, लोक संगीत, लोक वाद्यों के संरक्षण में महती भूमिका निभा रहे हैं. 'सुरमणि' की उपाधि से सम्मानित हैं. फोटो शौकिया खींचते हैं.

पहचान हिंदी त्रैमासिक देश से हम, हमसे देश

अंतर्राष्ट्रीय, हिंदी त्रैमासिक ऑन लाइन पत्रिका 'पहचान' हेतु आप भी रचनाएं भेज सकते हैं.

आलेख, समीक्षा, साक्षात्कार, शोध परक लेख, व्यंग्य, संस्मरण, यात्रा वृत्तांत, लोक साहित्य, बाल साहित्य, कविता, गीत, कहानी, लघु कथा आस्था, धरोहर, इतिहास, कला, विज्ञान, स्वास्थ आदि साहित्य की सभी विधाओं में रचनाओं का स्वागत है.

रचनाएं वर्ड फ़ाइल में अपनी तस्वीर और परिचय सहित भेजें. लेख के लिए 800 से 1,000 और कहानी के लिए अधिकतम शब्द सीमा 1600 शब्द है.

यदि आप अपना खींचा कोई चित्र पत्रिका के कवर पेज या फिर तिमाही चित्र चयन के लिए विचारार्थ भेजना चाहें तो अपने परिचय के साथ चित्र के बारे में बताते हुए ई मेल कर सकते हैं.

संपादक मंडल का निर्णय अंतिम निर्णय होगा, इसमें विवाद की गुंजाईश नहीं होगी.

editor@pehachaan.com